प्रकाशन तिथि : 26 जून 2018, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 36, अंक 12, कुल पृष्ठ 36

ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मंदिर, मॉडल टाउन, पानीपत (हरियाणा)

वीतराग-विज्ञान (419)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन :	251 रुपये
वार्षिक :	25 रुपये
एक प्रति :	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी :	7200
मराठी :	2000
कन्नड़ :	1000
कुल :	10200

अपनी प्रभुता अपने में है

प्रभो! तेरी प्रभुता तुझमें विद्यमान है। तू पर को प्रभुता दे और पर से अपनी प्रभुता मांगे उसमें तो तेरी पामरता है। अपनी प्रभुता की भीख दूसरों से मांगना उसमें तेरी प्रभुता-शोभा नहीं है; किन्तु दीनता है। उस दीनता को छोड़ और अपनी प्रभुता को धारण कर। जो जीव अपने आत्मा की प्रभुता को स्वीकार नहीं करता और मात्र बाह्यदृष्टि से भगवान के निकट जाकर कहता है कि "हे भगवान! आप प्रभु हैं... हे भगवान! मेरा हित करो... मुझे प्रभुता दो!" तो भगवान उससे कहते हैं कि रे जीव! तेरी प्रभुता हमारे पास नहीं है भाई! तुझमें ही तेरी प्रभुता है; इसलिये अन्तरोन्मुख हो... अन्तरदृष्टि करके अन्तर में ही अपनी प्रभुता को ढूंढ! जिसप्रकार हमारी प्रभुता हममें है, उसीप्रकार तेरी प्रभुता तुझमें है; तेरा आत्मा ही प्रभुता से परिपूर्ण है। अपने आत्मा को सर्वथा दीन मानकर बाहर से तू अपनी प्रभुता ढूंढेगा तो तुझे अपनी प्रभुता नहीं मिलेगी। "दीन भयो प्रभुपद जपे, मुक्ति कहाँ से होय?" अपने में प्रभुता विद्यमान है, उसे तो मानता नहीं है और बाह्य में भटकता है उसे तो मिथ्यात्व के कारण पामरता होती है।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 519

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 36 (वीर नि. संवत् - 2544) 419 अंक : 12

आवै न भोगन में....

आवै न भोगन में तोहि गिलान।।टेक।।

तीरथनाथ भोग तजि दीने, तिनतैं मन भय आन।
तू तिनतैं हू डरपत नाहीं, दीसत अति बलवान।।
आवै न भोगन में तोहि गिलान।।1।।

इन्द्रिय तृप्ति काज तू भौगे, विषय महा अघखान।
सो जैसे घृतधारा डारै, पावक ज्वाल बुझान।।
आवै न भोगन में तोहि गिलान।।2।।

जे सुख तौ तीछन दुःखदाई, ज्यों मधुलिप्त कृपान।
तातैं भागचंद इनको तजि आत्मस्वरूप पिछान।।
आवै न भोगन में तोहि गिलान।।3।।

– कविवर पण्डित भागचंदजी

संकल्प दिवस के रूप में मनाया डॉ. भारिल्ल का जन्मदिन

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ चल रहे प्रशिक्षण शिविर के अन्तर्गत दिनांक 25 मई को तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल का जन्मदिन संकल्प दिवस के रूप में मनाया गया।

इस अवसर पर पूरे देश में फैले उनके हजारों शिष्यों में से बड़ी संख्या में शास्त्री विद्वान उपस्थित हुए व सभी ने आजीवन इस वीतरागी तत्त्वज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने की शपथ ली।

कार्यक्रम में डॉ. भारिल्ल के अतिरिक्त श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा, पण्डित अभयजी शास्त्री देवलाली, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित रतनचंदजी शास्त्री कोटा, श्री अशोकजी जैन जबलपुर, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री उदयपुर, श्री सुरेशचंदजी जैन शिवपुरी, श्री प्रद्युम्नजी फौजदार, श्री मुन्नालालजी जैन, पण्डित सिद्धार्थजी दोशी रतलाम, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी टीकमगढ, श्री महेन्द्रजी गंगवाल जयपुर, श्री राहुलजी गंगवाल जयपुर, श्री चन्द्रभानजी जैन, श्रीमती गुणमाला भारिल्ल जयपुर, डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया मुम्बई, श्रीमती कुसुमजी गंगवाल आदि अनेक महानुभाव मंचासीन थे।

इस अवसर पर श्री महेन्द्र-राहुलजी गंगवाल जयपुर द्वारा तिलक एवं माल्यार्पण तथा श्री प्रेमचंदजी, रतनचंदजी एवं धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा द्वारा साफा पहनाकर डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल का सम्मान किया गया। सिद्धायतन के सभी ट्रस्टियों द्वारा शॉल व श्रीफल भेंटकर भारिल्लजी का सम्मान किया गया। इसके अतिरिक्त अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने भी डॉ. भारिल्ल का सम्मान किया।

पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री ने डॉ. भारिल्ल के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर ने सभी स्नातकों को आजीवन तत्त्वप्रचार का संकल्प दिलाया।

सभा को संबोधित करते हुए डॉ. भारिल्ल ने कहा कि जन्मदिन तो उनके मनाये जाते हैं, जिन्होंने इस जन्म मरण का नाश कर दिया है; ये तो संकल्प का दिन है। हमने भी आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के देहावसान पर यह संकल्प लिया था - ''जब तक यह देह रहेगी तब तक जिनशासन के इस तत्त्वज्ञान को जन-जन तक पहुंचायेंगे और आज भी संकल्पित हैं। यही कार्य मेरे 1000 शिष्य कर रहे हैं, जिससे पंचम काल के अन्त तक जिनशासन की यह पवित्र ध्वजा लहराती रहेगी।''

सभा का संचालन डॉ. जिनेन्द्रजी शास्त्री उदयपुर ने किया।

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

(५६-६८)

द्रव्य-गुण-पर्याय अनन्य हैं

पज्जयविजुदं दव्वं दव्वविजुत्ता य पज्जया णत्थि।
दोण्हं अणण्णभूदं भावं समणा परूवेंति।।

दव्वेण विणा ण गुणा गुणेहिं दव्वं विणा ण संभवदि।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तम्हा।।

(हरिगीत)

पर्याय बिन ना द्रव्य हो ना द्रव्य बिन पर्याय ही।
दोनों अनन्य रहे सदा - यह बात श्रमणों ने कही।।

द्रव्य बिन गुण हों नहीं गुण बिना द्रव्य नहीं बने।
गुण द्रव्य अव्यतिरिक्त हैं - यह कहा जिनवरदेव ने।।

जैन/श्रमण कहते हैं कि पर्यायों के बिना द्रव्य नहीं होता; और द्रव्य के बिना पर्यायें नहीं होती, क्योंकि दोनों में अनन्यभाव है।

जैन/श्रमण कहते हैं कि द्रव्य के बिना गुण नहीं होते और गुणों के बिना द्रव्य नहीं होता; क्योंकि दोनों में अव्यक्तिरिक्त भाव (अभिन्नपना) है।

ये गाथायें पंचास्तिकाय शास्त्र की १२वीं एवं १३वीं गाथायें हैं। इनमें यह समझाया गया है कि **द्रव्य और पर्यायें अन्य-अन्य नहीं हैं, अनन्य हैं। इसीप्रकार द्रव्य और गुण भी अन्य-अन्य नहीं हैं, अनन्य हैं।**

गुणों के समूह को **द्रव्य** कहते हैं और गुणों के परिणमन को **पर्याय** कहते हैं। अतः द्रव्य से गुण तथा पर्यायों का भिन्न होना संभव नहीं है।

द्रव्य और गुण-पर्यायों में मात्र अंशी-अंश का भेद है।

द्रव्य-गुण-पर्याय में भावभेद होने पर भी प्रदेशभेद नहीं है; इसलिए वे अनन्य ही हैं।

भाव और अभाव

भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो।
गुणपज्जएसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति।।

(हरिगीत)

उत्पाद हो न अभाव का ना नाश हो सद्भाव में।
उत्पाद-व्यय करते रहें सब द्रव्य गुण-पर्याय में।।

भाव अर्थात् जो पदार्थ है, उसका नाश नहीं होता और अभाव अर्थात् जो पदार्थ नहीं है, उसका उत्पाद नहीं होता। भाव अर्थात् **सभी पदार्थ अपने गुण-पर्यायों का उत्पाद-व्यय करते हैं।**

तात्पर्य यह है कि सत् का कभी नाश नहीं होता और असत् का उत्पाद नहीं होता; पर **सभी पदार्थों में प्रतिसमय परिणमन अवश्य होता रहता है।**

यह गाथा पंचास्तिकाय शास्त्र की १५वीं गाथा है। इसमें यह बताया गया है कि **जो है, उसका नाश नहीं होता; जो नहीं है, उसका उत्पाद नहीं होता; पर सभी द्रव्य अपने-अपने गुण-पर्याय में उत्पाद-व्यय करते रहते हैं।**

इस जगत में जिस पदार्थ का अस्तित्व है, सत्ता है, सद्भाव है; उस **पदार्थ का सर्वथा नाश कभी नहीं होता** तथा जिस पदार्थ का अस्तित्व नहीं है, सत्ता नहीं है, सद्भाव नहीं है, उसका सर्वथा अभाव है; **जो है ही नहीं; उसका उत्पाद नहीं होता।**

ऐसा होने पर भी लोक के सभी पदार्थों में प्रतिसमय परिणमन अवश्य होता रहता है। **कूटस्थ नित्य कोई नहीं है अर्थात् सर्वथा अपरिवर्तनशील कोई पदार्थ नहीं है।**

जिसप्रकार कोई सर्वथा नित्य नहीं है। उसीप्रकार कोई सर्वथा अनित्य भी नहीं है; सभी पदार्थ एकसाथ नित्यानित्यरूप हैं।

केवली के ज्ञान में

तक्कालिगेव सव्वे सदसब्भूदा हि पज्जया तासिं।
वट्टन्ते ते णाणे विसेसदो दव्वजादीणं।।

जे णेव हि संजाया जे खलु णट्ठा भवीय पज्जाया।
ते होंति असब्भूदा पज्जाया णाणपच्चक्खा।।

जदि पच्चक्खमजादं पज्जायं पलयिदं च णाणस्स।
ण हवदि वा तं णाणं दिव्वं ति हि के परूवेंति।।

(हरिगीत)

असद्भूत हों सद्भूत हों सब द्रव्य की पर्याय सब।
सद्ज्ञान में वर्तमानवत ही हैं सदा वर्तमान सब।।

पर्याय जो अनुत्पन्न हैं या नष्ट जो हो गई हैं।
असद्भावी वे सभी पर्याय ज्ञान प्रत्यक्ष हैं।।

पर्याय जो अनुत्पन्न हैं या हो गई हैं नष्ट जो।
फिर ज्ञान की क्या दिव्यता यदि ज्ञात होवें नहीं वो?।।

जीवादि द्रव्य जातियों की समस्त विद्यमान और अविद्यमान पर्यायें तात्कालिक (वर्तमान) पर्यायों की भाँति विशेष रूप से ज्ञान में झलकती हैं।

जो पर्यायें अभी उत्पन्न नहीं हुई हैं और जो पर्यायें उत्पन्न होकर नष्ट हो गई हैं वे अविद्यमान पर्यायें भी ज्ञान में प्रत्यक्ष ज्ञात होती हैं।

ज्ञान का ऐसा ही स्वभाव है कि उसमें भूतकालीन विनष्ट पर्यायें और भविष्यकालीन अनुत्पन्न पर्यायें भी स्पष्ट झलकती हैं।

यदि अनुत्पन्न और विनष्ट पर्यायें सर्वज्ञ के ज्ञान में प्रत्यक्ष ज्ञात न हों तो उस ज्ञान को दिव्य कौन कहेगा ?

सर्वज्ञ भगवान के ज्ञान की दिव्यता ही इस बात में है कि उसमें भूत-भविष्य की पर्यायें भी वर्तमानवत् प्रतिबिम्बित होती हैं।

ये गाथायें प्रवचनसार शास्त्र की ३७-३८-३९वीं गाथायें हैं। इनमें

केवलज्ञान का स्वरूप समझाया गया है।

ज्ञान चित्रपट के समान है। जिसप्रकार चित्रपट में अतीत, अनागत और वर्तमान वस्तुओं के आलेख्याकार साक्षात् एक क्षण में ही भासित होते हैं; उसीप्रकार ज्ञानरूपी भित्ति में भी अतीत, अनागत और वर्तमान पर्यायों के ज्ञेयाकार साक्षात् एक क्षण में ही भासित होते हैं।

सर्व ज्ञेयाकारों की तात्कालिकता अविरुद्ध है। जिसप्रकार नष्ट और अनुत्पन्न वस्तुओं के आलेख्याकार वर्तमान ही हैं; उसीप्रकार अतीत और अनागत पर्यायों के ज्ञेयाकार भी वर्तमान में ही हैं।

इसप्रकार आत्मा की अद्भुत ज्ञानशक्ति और द्रव्यों की अद्भुत ज्ञेयत्वशक्ति के कारण केवलज्ञान में समस्त द्रव्यों की तीनों काल की पर्यायों का एक ही समय में भासित होना अविरुद्ध है।

उक्त गाथा और उनकी टीकाओं में जो प्रमेय उपस्थित किया गया है, उसमें निम्नांकित बिन्दु विशेष ध्यान देने योग्य हैं –

सर्वप्रथम तो यह बात कही गई है कि भूतकालीन पर्यायें भले ही विनष्ट हो गई हों और भविष्यकालीन पर्यायें अभी उत्पन्न ही न हुई हों; फिर भी **केवलज्ञान में तो वे वर्तमान पर्यायों के समान ही विद्यमान हैं।**

दूसरे ज्ञान का उन्हें जानना – यह **ज्ञान की स्वरूपसंपदा है** और उन पर्यायों का ज्ञान में झलकना उक्त **पर्यायों की स्वरूपसंपदा है।**

तात्पर्य यह है कि उनको जानना ज्ञान की मजबूरी नहीं है और उनका ज्ञान में झलक जाना भी उनके लिए कोई विपत्ति नहीं है।

ज्ञान का जानना और ज्ञेयों का जानने में आना सहज स्वभाव है, उनकी स्वरूपसम्पदा है।

ऐसा प्रश्न उपस्थित होने पर कि जब वे अभी हैं ही नहीं, तब उनको जानना कैसे संभव है ?

कहा गया है कि **जब हमारे क्षायोपशमिकज्ञान में भूत और भविष्य की बातें जान ली जाती हैं तो फिर केवलज्ञान में जान लेने पर क्या आपत्ति हो सकती है ?**

आत्मा की ज्ञानशक्ति और पदार्थों की ज्ञेयत्व (प्रमेयत्व) शक्ति का ही यह कमाल है।

यहाँ चित्रपट के उदाहरण से ज्ञानशक्ति और आलेख्याकारों के उदाहरण से ज्ञेयत्वशक्ति के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है।

विगत ३७वीं गाथा में यह कहा था कि केवलज्ञान में सभी द्रव्यों की अतीत और भावी पर्यायें भी वर्तमान पर्यायों के समान ही झलकती हैं।

अब ३८ व ३९वीं गाथा में यह कह रहे हैं कि सभी द्रव्यों की भूत और भावी पर्यायें ज्ञान में विद्यमान ही हैं।

जिस ज्ञान में भूत और भावी पर्यायें ज्ञात न हों, उस ज्ञान को दिव्य कौन कहेगा ?

इन गाथाओं में न केवल केवलज्ञान की महिमा बताई गई है; अपितु केवलज्ञान का स्वरूप भी स्पष्ट किया गया है।

यद्यपि इन गाथाओं में बताई गई बात हाथ पर रखे आंवले के समान स्पष्ट है; तथापि कुछ लोग शंकायें-आशंकायें व्यक्त करते हैं। उन्हें लगता है कि इसे मान लेने पर तो 'सबकुछ निश्चित है' – यह सिद्ध हो जावेगा। ऐसी स्थिति में हमारे हाथ में तो कुछ रहेगा ही नहीं।

उक्त संदर्भ में मैंने **क्रमबद्धपर्याय** नामक कृति में विस्तार से चर्चा की है। जिज्ञासु पाठक उसका स्वाध्याय गहराई से अवश्य करें।

शास्त्र स्वाध्याय

अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
सुत्तत्थमग्गणत्थं सवणा साहंति परमत्थं ।।

(हरिगीत)

अरहंत-भासित ग्रथित-गणधर सूत्र से ही श्रमणजन।
परमार्थ का साधन करें अध्ययन करो हे भव्यजन।।

अरहंत भगवान द्वारा कहा गया और गणधरदेव द्वारा भले प्रकार से गूँथा गया जो जिनागम है, वही सूत्र है। ऐसे सूत्रों के आधार पर श्रमणजन परमार्थ को साधते हैं। तात्पर्य यह है कि **जिनागम श्रमणों के लिए परमार्थसाधक हैं।**

यह गाथा अष्टपाहुड़ शास्त्र के सूत्रपाहुड़ नामक पाहुड़ की पहली गाथा है; जिसमें अरहंत कथित और गणधरदेव द्वारा ग्रथित शास्त्रों के स्वाध्याय करने की प्रेरणा दी गई है।

अरहंत भगवान की दिव्यध्वनि में समागत, गणधरदेव द्वारा ग्रथित तथा **आचार्य भगवन्तों द्वारा लिखित जिनागम के माध्यम से श्रमण परमार्थ की साधना करते हैं।**

श्रमणजनों के मुख्यत: दो ही कार्य हैं -

१. अध्ययन और २. ध्यान।

गणधरदेव द्वारा भलीप्रकार गूंथी गई अरहंत भगवान की वाणी महाभाग्य से आज हमें सहज उपलब्ध है। इस वाणी के माध्यम से श्रमणजन अपना परमार्थ साधते हैं, परम पदार्थ भगवान आत्मा को जानते हैं; जानकर मानते हैं, उसमें अपनापन स्थापित करते हैं।

हे भव्यजन! वह वाणी आज तुम्हें भी उपलब्ध है, **महाभाग्य से हम सभी को सहज उपलब्ध है; उसका पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए।**

जिनसूत्र के ज्ञायक श्रमण

सुत्तं हि जाणमाणो भवस्स भवणासणं च सो कुणदि।
सूई जहा असुत्ता णासदि सुत्ते सहा णो वि।।

(हरिगीत)

डोरा सहित सुइ नहीं खोती गिरे चाहे वन भवन।
संसार-सागर पार हों जिनसूत्र के ज्ञायक श्रमण।।

जिसप्रकार सूत्र (डोरा) सहित सुई खोती नहीं है, सूत्र रहित सुई खो जाती है; उसीप्रकार सूत्र (शास्त्र) सहित श्रमण नाश को प्राप्त नहीं होते।

सूत्रों को जाननेवाले श्रमण संसार का नाश करते हैं; क्योंकि संसार के नाश और मुक्ति प्राप्त करने का उपाय सूत्रों (शास्त्रों) में ही बताया गया है।

यह गाथा भी अष्टपाहुड़ शास्त्र के सूत्रपाहुड़ नामक पाहुड़ की तीसरी गाथा है। इसमें बताया गया है कि शास्त्रों के भाव को जाननेवाले श्रमण संसार का नाश करते हैं, संसार समुद्र से पार होते हैं।

जिस सुई में डोरा न डला हो, यदि वह सुई खो जावे तो उसका मिलना असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है; उसीप्रकार जिस श्रमण ने शास्त्रों का अध्ययन गहराई से न किया हो; **उस श्रमण का मार्ग से भटक जाना अनिवार्य है; क्योंकि इस कलिकाल में तो संसारसागर से पार होने में एक मात्र शरण जिनशास्त्र ही हैं।**

सर्वज्ञ भगवान इस वर्तमान दृश्यमान क्षेत्र-काल में उपलब्ध नहीं हैं और मुक्तिमार्ग के ज्ञाता गुरु भी सर्वत्र उपलब्ध नहीं हैं। वे भी बहुत विरल हैं।

एक मात्र जिनसूत्र (जिनवाणी) ही शरण है। प्रवचनसार नामक शास्त्र में जिनवाणी को नित्यबोधक कहा है। आज हम उसे कहीं भी उपलब्ध कर सकते हैं और कभी भी पढ़ सकते हैं।

अन्य सभी कार्यों का तो क्षेत्र और काल प्रतिबंधित होता है; पर जिनवाणी के स्वाध्याय के लिए कहीं कोई प्रतिबंध नहीं है। दिन को पढ़ो, रात को पढ़ो; चाहे जहाँ पढ़ो, घर पर पढ़ो, मंदिर में पढ़ो, प्लेन में पढो। कहीं कोई रोक-टोक नहीं है।

यह जमाना तो इस दृष्टि से और भी अधिक सुविधाजनक है। उपलब्ध लगभग सभी शास्त्रों के अनेक भाषाओं में अनुवाद हो गये हैं, सभी भाषाओं का अनुवाद भी उपलब्ध है।

मूलशास्त्र तो उपलब्ध हैं ही। उनकी व्याख्यायें उपलब्ध हैं, अनुवाद उपलब्ध है, अनुशीलन भी उपलब्ध हैं।

पण्डित टोडरमलजी की भाषा में कहें तो कह सकते हैं कि आज सभी

प्रकार अवसर आ गया है; अत: चूकना योग्य नहीं है।

जो श्रमण शास्त्रों का गहराई से अध्ययन करते हैं, उनकी आज्ञानुसार चलते हैं, उनके बताये गये मार्गानुसार अपने जीवन को ढालते हैं; वे **मुक्तिमार्ग पर चलते हुए निकट भविष्य में मुक्ति को अवश्य प्राप्त कर सकते हैं।**

स्वाध्याय करना चाहिए

जिणसत्थादो अट्ठे पच्चक्खादीहिं बुज्झदो णियमा।
खीयदि मोहोवचयो तम्हा सत्थं समधिदव्वं ।।

(हरिगीत)

तत्त्वार्थ को जो जानते प्रत्यक्ष या जिनशास्त्र से।
दृगमोह क्षय हो इसलिए स्वाध्याय करना चाहिए।।

जिनशास्त्रों के द्वारा प्रत्यक्षादि प्रमाणों से पदार्थों को जानने वालों के नियम से मोह का नाश हो जाता है; इसलिए शास्त्रों का अध्ययन अच्छी तरह से अवश्य करना चाहिए।

यह गाथा प्रवचनसार नामक शास्त्र की ८६वीं गाथा है। इसमें स्वाध्याय करने की प्रेरणा दी गई है।

स्वाध्याय में अरहंत भगवान की दिव्यध्वनि का श्रवण, उसके अनुसार लिखे गये शास्त्रों का पठन-पाठन एवं उनके मर्म को जाननेवाले तत्त्वज्ञानी गुरुओं के उपदेश का श्रवण – ये सबकुछ आ जाता है।

उक्त सम्पूर्ण कथन से यही प्रतिफलित होता है कि देशनालब्धि के माध्यम से अरहंत भगवान को द्रव्यत्व, गुणत्व और पर्यायत्व से जानकर, तर्क की कसौटी पर कसकर निर्णय करना चाहिए। तदुपरान्त उन्हीं के समान अपने आत्मा को भी प्रत्यक्षादि प्रमाणों से जानकर आत्मानुभव करना चाहिए। दर्शनमोह के नाश करने का एकमात्र यही उपाय है।

ध्यान रहे, यहाँ मोह के नाश के लिए स्वाध्याय के अतिरिक्त और किसी भी क्रियाकाण्ड या शुभभाव को उपाय के रूप में, निमित्त के रूप में नहीं बताया है।

अत: आत्मकल्याण की भावना से मोह (मिथ्यात्व) का नाश करने के लिए धर्म के नाम पर चलनेवाले अन्य क्रियाकलापों से थोड़ा-बहुत विराम लेकर **पूरी शक्ति और सच्चे मन से स्वाध्याय में लगना चाहिए; अन्यथा यह मनुष्यभव यों ही चला जायेगा, कुछ भी हाथ नहीं आयेगा।**

सव्वे आगमसिद्धा

सव्वे आगमसिद्धा अत्था गुणपज्जएहिं चित्तेहिं।
जाणंति आगमेण हि पेच्छित्ता ते वि ते समणा।।

(हरिगीत)

जिन-आगमों से सिद्ध हों सब अर्थ गुण-पर्यय सहित।
जिन-आगमों से ही श्रमणजन जानकर साधें स्वहित।।

विचित्र गुण-पर्यायों से सहित सभी पदार्थ आगमसिद्ध हैं। श्रमणजन उन पदार्थों को आगम के अभ्यास से ही जानते हैं।

तात्पर्य यह है कि क्षेत्र व काल से दूरवर्ती एवं सूक्ष्म पदार्थ केवलज्ञान बिना प्रत्यक्ष नहीं जाने जा सकते; अतः वे क्षायोपशमिक ज्ञानधारी मुनिराजों द्वारा आगम से ही जाने जाते हैं।

यह गाथा प्रवचनसार नामक शास्त्र की २३५वीं गाथा है। इसमें कहा गया है कि अनेक गुण-पर्यायों सहित सभी पदार्थ आगम से जाने जाते हैं। उन्हें जानकर अपना हित साधना श्रेयस्कर है।

यह बात सहजसिद्ध है कि सभी पदार्थों की सिद्धि आगम से ही होती है। यहाँ सिद्धि का अर्थ प्राप्ति नहीं है। **यहाँ तो जानकारी को ही सिद्धि कहा जा रहा है।**

तात्पर्य यह है कि गुण-पर्यायवाले सभी पदार्थों की आवश्यक जानकारी जिनवाणी के स्वाध्याय से प्राप्त हो जाती है।

आत्मकल्याण में रत सन्तगण मुक्तिमार्ग में आवश्यक सभी जानकारी आगम और परमागमों के स्वाध्याय से ही प्राप्त कर लेते हैं।

इसप्रकार जिनवाणी माँ के सहयोग से वे अपना काम सिद्ध कर लेते

हैं। हमें भी उनका अनुसरण करना चाहिए।

आगम में चेष्टा ही जेष्ठ है, श्रेष्ठ है

एयग्गगदो समणो एयग्गं णिच्छिदस्स अत्थेसु।
णिच्छित्ती आगमदो आगमचेट्ठा तदो जेट्ठा।।

(हरिगीत)

स्वाध्याय से जो जानकर निज अर्थ में एकाग्र हैं।
भूतार्थ से वे ही श्रमण स्वाध्याय ही बस श्रेष्ठ है।।

सच्चा श्रमण वही है, जिसे अपने आत्मा की एकाग्रता प्राप्त हो। एकाग्रता उसे ही प्राप्त होती है, जिसने पदार्थों का निश्चय किया हो। पदार्थों का निश्चय आगम से होता है; अतः आगम में चेष्टा ही ज्येष्ठ है। **तात्पर्य यह कि आगम का अभ्यास आवश्यक है, अनिवार्य है और ज्येष्ठ है, सर्वश्रेष्ठ एकमात्र परम कर्त्तव्य है।**

यह गाथा प्रवचनसार नामक शास्त्र की २३२वीं गाथा है। इसमें कहा गया है कि आगम में की गई चेष्टा ही ज्येष्ठ है। तात्पर्य यह है कि **हम शास्त्र स्वाध्याय में जितना प्रयत्न करेंगे, उतना ही अच्छा होगा। अत: सन्तों को एक मात्र सर्वश्रेष्ठ कार्य स्वाध्याय ही है।**

आत्मा की अभिलाषा करनेवालों को तत्त्वार्थों का स्वरूप जानना अनिवार्य है। आत्मा एक तत्त्वार्थ है और उसका जानना भी अनिवार्य है। तत्त्वार्थ की सही जानकारी आगम के अध्ययन से होती है। इसीलिए आगम के अध्ययन में की गई चेष्टा (प्रयत्न) ही ज्येष्ठ है, श्रेष्ठ है।

महाशास्त्र तत्त्वार्थसूत्र में **तत्त्वार्थश्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहा है। इसप्रकार तत्त्वार्थश्रद्धान लक्षण है और सम्यग्दर्शन लक्ष्य।**

आत्मा भी एक तत्त्वार्थ है, एक तत्त्वार्थ नहीं, अपितु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्वार्थ है। उसे जानना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है।

तत्त्वार्थों का ज्ञान जिनागम के स्वाध्याय से, परमागम के स्वाध्याय से होता है। इसलिए शास्त्रों का सूक्ष्मता से अध्ययन करना अति आवश्यक है।

आगमहीन श्रमण

आगमहीणो समणो णेवप्पाणं परं वियाणादि।
अविजाणंतो अत्थे खवेदि कम्माणि किध भिक्खू।।

(हरिगीत)

जो श्रमण आगमहीन हैं वे स्वपर को नहिं जानते।
वे कर्मक्षय कैसे करें जो स्वपर को नहिं जानते?।।

आगम-हीन श्रमण आत्मा को और पर को नहीं जानता है। पदार्थों को नहीं जानने वाला श्रमण कर्मों का नाश किसप्रकार कर सकता है ?

यह गाथा भी प्रवचनसार शास्त्र की २३३वीं गाथा है। इसमें यह बताया गया है कि आगम का अभ्यास नहीं करनेवाले श्रमण स्व-पर को नहीं जानते और स्व-पर को नहीं जाननेवाला श्रमण कर्मों का क्षय कैसे कर सकता है ?

वस्तुत: बात यह है कि आगम के अभ्यास बिना न तो स्व-पर भेदविज्ञान होता है और न त्रिकाली ध्रुव निज परमात्मा का ही ज्ञान होता है। **परात्मज्ञान (भेदविज्ञान) और परमात्मज्ञान से शून्य व्यक्ति के द्रव्य मोहादि और भाव मोहादि कर्मों अथवा ज्ञप्तिपरिवर्तनरूप कर्मों का क्षय नहीं होता।**

इसप्रकार परात्मज्ञान और परमात्मज्ञान से शून्य आत्मा को द्रव्यकर्मों के उदय से होनेवाले शरीरादि और तत्संबंधी मोह-राग-द्वेषादि भावों के साथ एकता का अनुभव करने के कारण वध्य-घातक भाव के विभाग का अभाव होने से मोहादि द्रव्य-भावकर्मों का क्षय सिद्ध नहीं होता।

तथा परज्ञेयनिष्ठता से प्रत्येक वस्तु के उत्पाद-विनाशरूप परिणमित होने से अनादिकाल से परिवर्तन को प्राप्त ज्ञप्ति का परिवर्तन परमात्मनिष्ठता के अतिरिक्त अनिवार्य होने से ज्ञप्ति-परिवर्तनरूप कर्मों का क्षय भी सिद्ध नहीं होता। इसलिए **कर्मक्षयार्थियों को सभीप्रकार से आगम की उपासना करना चाहिए।**

आचार्य जयसेन इस गाथा की टीका में भी आगम के साथ-साथ अध्यात्म के प्रतिपादक परमागम के अभ्यास की अनिवार्यता सिद्ध करते हैं।

सब कुछ मिलाकर इस गाथा और उसकी टीकाओं में एक ही बात कही गई है कि जिस श्रमण को आगम और परमागम का ज्ञान नहीं है; वह श्रमण न तो सही रूप में स्वयं को ही जानता है और न पर को ही जानता है। इसप्रकार **स्व को और पर को जाने बिना अर्थात् दोनों के बीच भेदज्ञान किये बिना कर्मों का नाश कैसे हो सकता है ?**

तात्पर्य यह है कि कर्मों के नाश के लिए स्व और पर के बीच की सीमा रेखा जानना अत्यन्त आवश्यक है; क्योंकि इस सीमा रेखा को जाने बिना स्व का ग्रहण और पर का त्याग कैसे संभव है ?

कर्मों का नाश कर मुक्ति को प्राप्त करने के लिए आत्मज्ञान और स्व और पर के बीच में भेदविज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है।

इसलिए आत्मज्ञान और भेदविज्ञान के लिए आत्मार्थियों को आगम और परमागम का अभ्यास अवश्य करना चाहिए।

व्रत व पूजादि पुण्य हैं

पूयादिसु वयसहियं पुण्णं हि जिणेहिं सासणे भणियं।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो धम्मो ।।

(हरिगीत)

व्रत सहित पूजा आदि सब जिन धर्म में सत्कर्म हैं।
दृगमोह - क्षोभ विहीन निज परिणाम आतमधर्म हैं।।

जिनशासन में जिनेन्द्रदेव ने इसप्रकार कहा है कि व्रत सहित पूजादि शुभकार्य करना पुण्य है और मोह (मिथ्यात्व) व क्षोभ (राग-द्वेष) से रहित आत्मा का परिणाम धर्म है।

तात्पर्य यह है कि **शुभभाव पुण्य है और शुद्धभाव (वीतराग भाव) धर्म है।**

यह गाथा अष्टपाहुड़ शास्त्र के भावपाहुड़ की ८३वीं गाथा है। इसमें यह कहा गया है कि **मोह (मिथ्यात्व) और क्षोभ (राग-द्वेष) से रहित परिणाम धर्म है** तथा व्रत धारण करना और जिनेन्द्र भगवान की पूजा करना आदि शुभभाव पुण्य हैं। ऐसा जिनेन्द्र भगवान के जिनशासन में कहा है।

इसीप्रकार की एक गाथा प्रवचनसार में भी आती है। जो यहाँ कुन्दकुन्द शतक में अगली गाथा (६९) के रूप में संकलित है।

उस गाथा में नीचे की पंक्ति इस गाथा की नीचे की पंक्ति के एकदम समान है। मात्र इतना ही अन्तर है कि इस गाथा में अन्तिम पद **धम्मो** है और उसमें **समो** है।

दोनों का अर्थ एक ही है; क्योंकि इसी प्रवचनसार में **समभाव को ही धर्म कहा है।**

(क्रमशः)

पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट, जयपुर द्वारा
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

41वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(रविवार, दिनांक 12 अगस्त से मंगलवार 21 अगस्त, 2018 तक)

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी पण्डित टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय का **41वाँ शिक्षण शिविर पण्डित टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में दिनांक 12 अगस्त से 21 अगस्त,** 2018 तक लगने जा रहा है।

शिविर में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल एवं अन्य अनेक विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

शिविर में जयपुर आने हेतु अपने टिकिट शीघ्र करा लेवें। कृपया आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने पधारने की पूर्व सूचना जयपुर कार्यालय को अवश्य भेजें।

संपर्क सूत्र - पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.)
फोन : 0141-2705581, 2707458

विशेष ध्यान दें! - यह शिविर उपरोक्त तिथियों में जयपुर में संपन्न होना निश्चित है, अत: कोई भी किसी भी प्रकार के भ्रम में न रहे!

छहढाला प्रवचन

श्रावक के चार शिक्षाव्रत

धरि उर समता भाव, सदा सामायिक करिये।
परव चतुष्टय मांहि, पाप तज प्रोषध धरिये।।
भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै।
मुनि को भोजन देय, फेर निज करहि अहारै।।१४।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

भाई ! सत्य समझकर तू अपना लाभ ले ले, अपने आत्मा को भव दु:ख से छुड़ाकर मोक्ष सुख प्राप्त करा ले। जगत के अज्ञानी लोग तो असत् की भी प्रशंसा करते हैं और सत् की भी निन्दा करते हैं; परन्तु उससे तुझे क्या प्रयोजन है? उससे सत्य बदल नहीं जायेगा। अरे ! जगत की दृष्टि का क्या मूल्य है? उसके माप का क्या मूल्य है? तेरी सत्य वस्तु कदाचित् जगत के लोगों के ध्यान में न आवे और सत्य का मूल्य वे न जानें तो उससे तेरे गुण में कोई हानि थोड़े ही हो जायेगी। तेरे गुणों को जगत के अभिनन्दन की कोई आवश्यकता नहीं है। जगत को सत्-असत् का बोध ही कहाँ है? फिर उसके प्रमाण-पत्र का क्या करना है ? धर्मी तो स्वयं अपने से ही नि:शंक वर्तता हुआ मोक्षमार्ग को स्वीकार करता है, फिर अब जगत स्वीकारे या न स्वीकारे, इससे क्या प्रयोजन है? बाहर में कर्मजनित सम्पदा अल्प हो या बहुत हो, लोगों में मान विशेष हो या कम हो, कोई बैर रखे, इसके साथ आत्मा के हित का कोई संबंध नहीं है। अरे ! जहाँ राग के साथ भी चैतन्य का संबंध नहीं, वहाँ अन्य की क्या कथा ? ऐसे आत्मा

का वीतराग-विज्ञान अपूर्व है, वही ''दु:खहारी सुखकार'' है।

सम्यग्दृष्टि श्रावक को पाँच अणुव्रत के साथ दिग्व्रत-देशव्रत अनर्थदण्ड परित्यागव्रत – ये तीन अणुव्रत होते हैं। वे व्रत में गुणकारक होने से ''गुणव्रत'' कहे जाते हैं। इसके साथ ही मुनिपने के अभ्यासरूप चार शिक्षाव्रत होते हैं। जिनका वर्णन १४वें छन्द में करेंगे।

क्षेत्र की मर्यादा करके वह श्रावक अपने परिणाम में आरम्भ समारंभ को रोकता है। मर्यादा से बाहर के क्षेत्र संबंधी किसी आरंभ परिग्रह का विचार वह नहीं करता, इतनी स्थिरता उसके परिणामों में हो गई है। किसी की गुप्त बात को प्रगट करे और उसे दु:ख हो – ऐसी प्रवृत्ति अनर्थ-दण्ड है, श्रावक ऐसा नहीं करता। सामने वाले का भाव उसके साथ है, मैं क्यों किसी का अनिष्ट चिन्तवन करूँ। लड़ाई में अमुक हारे या अमुक जीते, ऐसी हार-जीत की निष्प्रयोजन कषाय धर्मी श्रावक नहीं करता; क्योंकि वह अनर्थकारी है, स्वयं को उससे कोई प्रयोजन नहीं। अमुक जीव पापी है, अत: उसका नुकसान हो जाये तो अच्छा – ऐसा विचार श्रावक को नहीं होता। इसीप्रकार हिंसक लड़ाई, वीभत्स सिनेमा, रेडियो, ताश पत्ता, विषय-कषाय पोषक उपन्यास इत्यादि में वह रस नहीं लेता। उसे तो अपने वीतरागी चैतन्य का रंग लग गया है, फिर भला अन्य अनर्थकारी पापकार्यों का रस कैसा ?

देखो तो सही यह परिणामों की मर्यादा! जो सम्यग्दृष्टि व्रती हुआ उसके उपर्युक्त राग-द्वेष के विचार भी नहीं आते। मन में पाप के विचार न करे, वचन से भी पाप पोषक उपदेश न देवे तथा काया से भी वैसे पाप कार्यों में न प्रवर्ते। इसप्रकार अनर्थकारी कार्यों का उसके मन-वचन-काय से त्याग हो गया है। अहा ! वह तो वीतरागमार्ग का पथिक है, उसके निर्दोष जीवन की क्या बात कहें।

श्रावक के चार शिक्षाव्रतों का वर्णन

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान के पश्चात् जो चारित्र पालन के लिए तत्पर हुआ है – ऐसे धर्मी श्रावक के पाँच अणुव्रतों तथा तीन गुणव्रतों का वर्णन किया। अब चार शिक्षाव्रत कहते हैं –

सामायिक – श्रावक प्रतिदिन प्रात:-मध्याह्न-सायं चैतन्य में अपना चित्त एकाग्र करके, राग-द्वेष रहित समताभाव धारण करके सामायिक करता है। सामायिक के काल में श्रावक को भी साधु के समान माना गया है।

प्रोषधोपवास – प्रतिमास दो अष्टमी और दो चतुर्दशी – इसप्रकार पर्व -तिथियों में शक्ति अनुसार उपवास धारण करना और आरंभ-समारंभ छोड़कर आत्मचिंतन करना प्रोषधोपवास है।

भोगोपभोगपरिमाण – भोग से विरक्त होकर सर्व संग परित्यागी होने की भावना होने पर भी जब तक साधुदशा नहीं होती, तबतक श्रावक भोग-उपभोग की मर्यादा बांध लेता है और मर्यादित प्रतिज्ञा से अधिक परिग्रह का ममत्व त्याग देता है।

अतिथि संविभाग – भोजन के समय श्रावक हमेशा मुनि को याद करके आहारदान की भावना करता है। मुनिराज पधारे तो मैं उन्हें आहार देकर बाद में भोजन करूँ – ऐसी भावना उसको सदा रहती है। मुनिराज के अतिरिक्त श्रावक अन्य साधर्मी धर्मात्माओं को भी आदर पूर्वक भोजन कराता है।

(क्रमश:)

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

7 जून से 9 जुलाई	विदेश	तत्त्वप्रचारार्थ
12 से 21 अगस्त	जयपुर	महाविद्यालय शिविर
6 से 13 सितम्बर	अध्यात्म स्टडी सर्किल-मुम्बई	श्वेताम्बर पर्यूषण
14 से 25 सितम्बर	बेलगांव (कर्नाटक)	दशलक्षण महापर्व
5 से 12 अक्टूबर	जयपुर	शिक्षण शिविर

नियमसार प्रवचन –

आचार में स्थिरता वाला प्रतिक्रमणमय

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८५ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलत: इसप्रकार हैं –

मोत्तूण अणायारं आयारे जो दु कुणदि थिरभावं।
सो पडिकमणं उच्चइ पडिकमणमओ हवे जम्हा ।।८५।।

(हरिगीत)

जो जीव छोड़ अनाचरण आचार में थिरता धरे।
प्रतिक्रमणमय है इसलिए प्रतिक्रमण कहते हैं उसे।।८५।।

जो जीव अनाचार छोड़कर आचार में स्थिरता करता है, वह जीव प्रतिक्रमण कहा जाता है; क्योंकि वह प्रतिक्रमणमय है।

(गतांक से आगे....)

इस गाथा में निश्चयचरणात्मक परम उपेक्षा संयम के धारण करनेवाले को निश्चय प्रतिक्रमण होता है – ऐसा कहा है।

आत्मा ज्ञानस्वभावी है – ऐसी श्रद्धा-ज्ञान के उपरान्त अन्तर चारित्रदशा जिसको प्रगट हुई है, ऐसे संयमधारी मुनि को निश्चयप्रतिक्रमण होता है। वे मुनि परम उपेक्षावाले होते हैं अर्थात् वे साक्षात् भगवान की तथा जिस भाव से तीर्थंकर नामकर्म बंधे, उसकी भी उपेक्षा करते हैं। सम्यक्त्वी जीव को परपदार्थ तथा विकार की उपेक्षा ही वर्तती है, किन्तु यहाँ तो विशेष स्थिरतापूर्वक होनेवाली उपेक्षा की बात है।

नियम से परम उपेक्षा संयमवाले मुनि को शुद्धात्मा की आराधना के अतिरिक्त अन्य सब अनाचार है। मैं जानने-देखनेवाला हूँ, पवित्र हूँ,

उसकी सन्मुखता के अलावा अन्य शुभाशुभभाव सब अनाचार हैं। तीर्थंकर भगवान की अपेक्षा रखना अथवा जिस भाव से तीर्थंकर नामकर्म बंधे, कर्म का बन्ध पड़े तथा व्यवहाररत्नत्रय के परिणाम आदि सब अनाचार हैं। अशुभभाव से बचने को शुभभाव आवे, वह बात भिन्न है; परन्तु है वह अनाचार ही। शुद्ध स्वभाव में रमणता करना - यह एक ही आचार है। अतिक्रम-आत्मा से दूर बसना, व्यतिक्रम-विशेष दूर बसना, अतिचार-निर्बलता का दोष अस्थिरता का दोष, और अनाचार - ऐसे चार भेद हैं; वे सब अनाचार के भेद हैं। मुनि की स्वभाव में न ठहर सकनेवाली निर्बलता भी अनाचार में जाती है।

चाहे जैसे द्रव्य, क्षेत्र, काल, संयोग अथवा भाव में हो; फिर भी पर के ऊपर की दृष्टि हटाकर स्वभाव की दृष्टि कर!।

यह वस्तुस्वरूप जीव ने कभी रुचिपूर्वक सुना ही नहीं। जब सुना ही नहीं तो धारण-ग्रहण करेगा कैसे? और उसके बिना स्वभाव में ढलेगा ही कैसे? जैसे किसी भी वस्तु को रखने के लिए पात्र चाहिये, वैसे ही धर्म समझने की भी पात्रता चाहिए। परवस्तु-लक्ष्मी, शरीरादि पुण्य-पाप की रुचि छोड़कर, निर्विकार ज्ञानस्वभावी आत्मा की रुचि करना पात्रता है और स्वभाव में अन्तर अनुभव करना - वह कार्य है। 'बाहर के पदार्थ और निमित्त, वे मैं नहीं; मैं तो चैतन्यस्वभावी हूँ' - ऐसे विकल्प को भी स्वभाव में स्थान नहीं है। अन्तर ज्ञानस्वभाव की रुचि में जम जाना चाहिए। संयोग तो अपने कारण से आयेंगे-जायेंगे, वहाँ दिशा अथवा लक्ष्य किस तरफ है? चाहे जिस द्रव्य का संयोग हो; चाहे जो क्षेत्र हो - महाविदेह हो अथवा यहाँ हो; चाहे जो काल हो - चौथाकाल हो अथवा पाँचवाँ हो; चाहे जो भाव हो - शुभ हो या अशुभ हो; चाहे जो संयोग हो - मस्तक पर तलवार ताने शत्रु खड़ा हो अथवा स्त्री चन्दन चुपड़ती हो - ये सब तो पर हैं। उन संयोगों क्षेत्रों और शुभाशुभभावों पर से दृष्टि

हटाकर शुद्धस्वभाव की दृष्टि कर! अज्ञानी मानता है कि मैं पर का कर्त्ता हूँ, संयोगों को इच्छानुसार बदल सकता हूँ, रोग में से निरोगता ला सकता हूँ; परन्तु ये सब बकवास हैं। संयोग तो जो हैं, उन्हें फेरने की दृष्टि छोड़ और स्वभाव की दृष्टि कर! चौदह पूर्व का सार यही है कि शुद्धात्मा की आराधना के अलावा सब अनाचार है।

जो जीव शुभाशुभभाव छोड़कर निज परमात्मतत्त्व की भावना में स्थिर होते हैं - उनको निश्चयप्रतिक्रमण होता है।

यहाँ मुनि की बात है। दृष्टि अपेक्षा से अनाचार छोड़ने के उपरान्त, अस्थिरता का अनाचार अर्थात् पुण्य-पाप की अस्थिरता को छोड़कर मुनि अपने स्वभाव में स्थिर होते हैं - उन्हें प्रतिक्रमणस्वरूप कहते हैं। अस्थिरता छूटकर स्थिरता का होना एक ही समय में होता है, उसमें समयभेद नहीं है।

प्रतिक्रमण का स्वरूप नास्ति से कथन करके अब अस्ति से कहते हैं। वस्तुस्वभाव में स्थिरता करने पर अनाचार छूट जाता है, वीर्य आत्मा की ओर लगता है। साधकदशा में वीर्य की एक पर्याय में दो भाग हैं; वीर्य का एक अंश स्वभाव में कार्य करता है और दूसरा अंश शुभाशुभभावों में रुका है। यदि वीर्य सर्वथा स्वभाव में ही हो तो केवलज्ञानी हो जाय; परन्तु साधक होने से वीर्य आंशिक अशुद्धता और आंशिक शुद्धता में रुका है। अब मुनि अपने स्वभाव की तरफ वीर्य को लगाते हैं। अपने आत्मा का स्वभाव कैसा है? सहजज्ञान का विलास उसका लक्षण है। इस लक्षण से लक्षित है। अपना आत्मा ही परम तत्त्व है। ऐसे परमतत्त्व की भावनास्वरूप आचार में जो सहज वैराग्यभावनारूप से परिणमते हैं और स्थिर होते हैं; वे परम तपरूप लक्ष्मी के स्वामी (मुनि) स्वयं ही प्रतिक्रमणस्वरूप कहे जाते हैं। यहाँ जो आचार-भावना कही है, वह नवीन प्रकट हुई पर्याय की बात है। **(क्रमशः)**

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

जीवत्व शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

व्यवहार का सर्वथा अभाव है, ऐसा नहीं है, व्यवहार में व्यवहार भले हो; परन्तु शक्ति के परिणमन में व्यवहार अर्थात् अशुद्धता-राग समाता नहीं है, अभावरूप है; क्योंकि शक्ति शुद्ध है और उसका परिणमन भी शुद्ध है, अशुद्धता किसी शक्ति का कार्य नहीं है।

अशुद्धता तो पर और पर्याय के लक्ष से होती है, परन्तु धर्मी की पर और पर्याय की दृष्टि ही छूट गई है।

देखो! द्रव्य में अनन्त शक्तियाँ हैं, किन्तु उन शक्तियों का क्षेत्र भिन्न-भिन्न नहीं है।

एक जीवत्वशक्ति अन्य अनन्त शक्तियों में व्यापक है। प्रत्येक शक्ति अन्य अनन्त शक्तियों में व्यापक है तथा एक-एक शक्ति अन्य अनन्त शक्तियों को निमित्त है अर्थात् एक गुण कारण तथा दूसरा गुण कार्य – ऐसा कहने में आता है; यह व्यवहार है।

निश्चय से तो गुण स्वयं ही कारण और स्वयं ही कार्य है। एक गुण के परिणमन के समय दूसरा गुण अनुकूलरूप से निमित्त के रूप में परिणमन करता है। दोनों गुणों का समकाल तथा समव्याप्ति है। बस; यही कार्य के उपादान और निमित्त कारण की संधि है। कोई किसी का परिणमन कर दें – ऐसा नहीं।

प्रश्न – फिर प्रवचनसार में राग का कर्त्ता ज्ञानी है ऐसा क्यों कहा?

समाधान – प्रवचनसार में ४७ नयों का वर्णन ज्ञानप्रधान शैली से किया है। वहाँ आत्मानुभव होते ही जीवत्वशक्ति का निर्मल परिणमन हुआ तथा साथ में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि का परिणमन हुआ, उतनी तो शुद्धता है तथा जितना बाकी राग रहा है, उतनी अशुद्धता है।

परिणमन की अपेक्षा जितना रागरूप परिणमन है, उसका कर्ता ज्ञानी आत्मा है – ऐसा वहाँ ज्ञानप्रधान शैली से कहा है। करने लायक है – इस अपेक्षा (दृष्टि की अपेक्षा) ज्ञानी राग का कर्ता है ऐसा नहीं; परन्तु अपनी पर्याय में राग का परिणमन है उसे ज्ञानी जानते हैं कि यह राग मेरा परिणमन है तथा यह मेरे में हुआ है पर यह मेरा स्वभाव नहीं, बल्कि अपराध है।

जबकि **यहाँ शक्ति के अधिकार में दृष्टि की प्रधानता से बात है।**

आ हा हा....! आत्मा आनन्दस्वरूप प्रभु है, ऐसे आत्मद्रव्य की दृष्टि होते ही पर्याय में आनन्द उत्पन्न न हो, ऐसा है ही नहीं। **दृष्टिप्रधान शैली में तो जिसे स्वभाव के आश्रय से निर्मलता प्रगट हुई हो, वह आत्मा है।** राग को आत्मा की पर्याय गिनी ही नहीं, दृष्टि अशुद्धता को आत्मापने स्वीकारती ही नहीं।

दृष्टि का विषय अभेद, एक निर्विकल्प चैतन्यमात्र आत्मा है तथा दृष्टि भी निर्विकल्प चैतन्यस्वरूप है। उसमें राग का स्वीकार ही नहीं, इसलिये शक्ति के अधिकार में राग क्षणिक उपादान है – ऐसी भी बात नहीं की है।

ज्ञान का स्वभाव स्व-पर प्रकाशक है, इसलिए ज्ञान स्व को जानता है, जितनी शुद्धता प्रगट हुई और जितनी अशुद्धतारूप राग का परिणमन है उसे भी वह मेरा अपराध है – ऐसा जानता है।

अरे भाई! राग से भिन्न होकर निज स्वरूप की दृष्टि तथा अनुभव करते ही सुख प्रगट होता है – श्री सद्गुरु भगवंतों ने ऐसा स्वरूप बताया है। अहो! यह तो इस पंचमकाल में अमृत की वर्षा बरसी है भाई!

(क्रमशः)

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : यदि बाह्यवस्तु बंध का कारण नहीं है,तो शास्त्रों में बाह्यवस्तु के त्याग करने का उपदेश क्यों दिया ?

उत्तर : बाह्यवस्तु बंध का कारण है ही नहीं; क्योंकि वह बाह्यवस्तु अपनी आत्मा के द्रव्य-गुण में तो है नहीं और पर्याय में भी उसका अभाव है; अत: वह बंध का कारण नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि बंध का कारण जो अध्यवसान है, वह बाह्यवस्तु के आश्रय से ही होता है, उसके आश्रय बिना नहीं होता; इसलिये बंध का कारण मानकर बाह्यवस्तु के भी त्याग का उपदेश जिनवाणी में किया गया है।

प्रश्न : संसार की थकावट लाने का उपाय क्या है ?

उत्तर : संसार में जितने भी शुभाशुभ भाव हैं, वे सब दु:खरूप हैं। उनके फल में चतुर्गति मिलती है । वहाँ अनेकप्रकार के दु:ख और आकुलतायें हैं – ऐसा अपने को अन्दर से लगना चाहिए। शुभाशुभ भाव दु:खरूप ही हैं – ऐसा लगे तो संसार की थकावट लगे।

प्रश्न : क्या धर्म करने से शरीर का रोग नहीं मिटता ?

उत्तर : अरे भाई ! शरीर का रोग मिटाना धर्म का कार्य नहीं है, पूर्व का पुण्य पल्ले हो तो शरीर निरोगी होता है। धर्म के फल से शरीर का रोग मिटता है – ऐसा माननेवाला धर्म के स्वरूप को समझा ही नहीं है। पुण्य शुभपरिणाम से होता है और धर्म शुद्धस्वभाव के आश्रय से प्रगट होता है, इसका उसे विवेक नहीं है। सनतकुमार चक्रवर्ती को दीक्षा लेने के बाद महान धर्मात्मा होने पर भी अनेक वर्षों तक शरीर में रोग रहा और शरीर पर धर्म का कोई असर नहीं हुआ। धर्म से शरीर निरोगी रहे – ऐसा नहीं है। धर्म के फल में तो आत्मा में अपूर्व आनन्द का अनुभव प्रगट होता है। धर्म के साथ पुण्य और शरीरादि का सम्बन्ध ही नहीं होता। मोक्षमार्ग में पुण्य का भी निषेध है। शुभभाव करते-करते धर्म होगा – यह मान्यता ही भूलभरी है।

प्रश्न : यदि राग का भी आदर कर लिया जाये तो क्या हानि है ? आगम में राग के आदर का इतना निषेध क्यों ?

उत्तर : राग का जहाँ आदर है, वहाँ वीतरागस्वभाव का अनादर है और जहाँ वीतरागस्वभाव का अनादर है, वहाँ उस वीतरागता को प्राप्त सर्वज्ञ का, सर्वज्ञता के साधक साधुओं का तथा उसके प्रतिपादन करनेवाले शास्त्रों का भी अनादर है। वीतरागी देव-गुरु-शास्त्र की आज्ञा तो वीतरागभाव की ही पोषक है, उसके बदले जिसने अपने अभिप्राय में राग का पोषण किया, उसने वास्तव में वीतरागी की आज्ञा का उल्लंघन किया है। बाहर से भले ही वीतरागी की भक्ति-पूजा-बहुमान का शुभभाव करता हो; परन्तु अन्तर में वीतरागी स्वरूप के अज्ञानपने के कारण वह अपने अभिप्राय में तो राग का ही सेवन और राग की ही भक्ति-पूजा-बहुमान कर रहा है। अज्ञानी का यह विपरीत अभिप्राय ही वीतराग की महान विराधना करके अमाप पाप का बंध करता है, इसका विचार जगत के जीवों को नहीं है।

प्रश्न : पुण्य प्राप्त हो ऐसा कौनसा धन्धा है ?

उत्तर : सच्चे जैन शास्त्रों का वाँचन, विचार, श्रवण करे तो पुण्य बंध हो और यदि उसमें सच्ची समझ करे तो 84 के भ्रमण से छुटकारा मिल जाये।

प्रश्न : स्त्री-पुत्रादि को लुटेरों की टोली मानने से घर में झगड़ा होता है ?

उत्तर : परद्रव्य को अपना मानने से ही अंदर में मिथ्यात्व का बड़ा झगड़ा होता है, जिससे चार गति का दु:ख भोग रहा है। कुटुम्बीजन स्वार्थ के सगे हैं, यह तो हकीकत है। अपने स्वार्थ-पोषण के लिये प्रेम करते हैं – ऐसा समझकर अंदर से ममत्व छोड़ना है। यह तो अनादि का झगड़ा छुड़ाने की बात है। लोग 15 अगस्त को स्वतंत्रता-दिवस कहते हैं। पर से सुख की वांछारूप दीनता छोड़कर स्वभाव में सुख मानना ही सच्ची स्वतंत्रता है। उस अविनाशी स्वराज्य को भोगनेवाला सम्यग्दृष्टि धर्मात्मा है, वही सच्चा राजा है। बाह्य राज्य को भोगनेवाला राजा तो पर से सुख लेने की आकुलता की ज्वाला को भोगता है, आत्मशांति को नहीं।

समाचार दर्शन -

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित –

52वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर संपन्न

● देश के विभिन्न प्रान्तों से पधारे हुये 1500 से अधिक आत्मार्थी ज्ञानयज्ञ में लाभान्वित ●प्रात: 5 से रात्रि 10 बजे तक विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से 16 घण्टे अविरल ज्ञानगंगा प्रवाहित ● शिविर में लगभग 65 विद्वानों द्वारा धर्मप्रभावना।

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ रविवार, दिनांक 20 मई से बुधवार, दिनांक 6 जून तक पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित एवं श्री गुरुदत्त कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट द्वारा आयोजित 18 दिवसीय 52वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर सानन्द संपन्न हुआ।

श्री समयसार मंडल विधान के आमंत्रणकर्ता श्रीमती कुसुम गंगवाल- पुत्रवधु सुनीता एवं रीना गंगवाल जयपुर, श्री प्रवचनसार मंडल विधान के आमंत्रणकर्ता श्रीमती सुलोचनाजी सिंघवी धर्मपत्नी श्री मनोहरलालजी सिंघवी (मुलतानवाले) जयपुर एवं श्री नियमसार मंडल विधान के आमंत्रणकर्ता श्री घनश्यामप्रसाद, सुखानन्द, माधवप्रसादजी शास्त्री व समस्त शाह परिवार शाहगढ थे।

विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित प्रियंकजी शास्त्री खुरई, पण्डित रूपेन्द्रजी शास्त्री जयपुर एवं पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री रहली द्वारा संपन्न हुये।

प्रात:कालीन प्रवचन – प्रतिदिन **आध्यात्मिकसत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी** के इष्टोपदेश पर सी.डी.प्रवचन के अतिरिक्त तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** द्वारा समयसार-प्रवचनसार-नियमसार विधानों की जयमाला पर हुआ, इसके अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली एवं डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर के भी प्रवचनों का लाभ मिला।

रात्रिकालीन प्रवचन – ब्र.सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा प्रवचनसार की चरणानुयोगसूचक चूलिका पर प्रतिदिन हुये प्रवचनों के पूर्व डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, डॉ. नरेन्द्रजी शास्त्री जयपुर, पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा, डॉ. मनीषजी शास्त्री मेरठ आदि विद्वानों द्वारा विभिन्न विषयों

पर मार्मिक प्रवचन हुये। प्रवचनों के अतिरिक्त क्रमबद्धपर्याय व नयचक्र पर गोष्ठी, सिद्धायतन के छात्रों द्वारा गुरुदत्त केवली की जीवनगाथा व शाहगढ पाठशाला के बच्चों द्वारा वज्रदत्त चक्रवर्ती का वैराग्य नामक नाटक आदि अनेक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ।

दोपहर की व्याख्यानमाला में – डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर, पण्डित रतनचंदजी कोटा, पण्डित शिखरचंदजी शास्त्री सागर, पण्डित संजयजी सेठी जयपुर, पण्डित निखलेशजी दलपतपुर, पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, डॉ. नेमचंदजी खतौली, पण्डित अजितजी अलवर, पण्डित निलयजी आगरा, पण्डित मनीषजी कहान जयपुर, पण्डित अशोकजी इन्दौर, पण्डित गणतंत्रजी आगरा, पण्डित जिनकुमारजी जयपुर, पण्डित शुभमजी सिद्धायतन, डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया आदि विद्वानों के विविध विषयों पर व्याख्यान हुए।

प्रशिक्षण कक्षायें – बालबोध प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर ने एवं शिक्षण पद्धति की मुख्य कक्षा पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर ने ली। प्रवेशिका प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली द्वारा एवं शिक्षण पद्धति की मुख्य कक्षा पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा ली गई।

प्रशिक्षण अभ्यास कक्षाओं में पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा एवं पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई के निर्देशन में सर्वश्री पण्डित निखलेशजी शास्त्री दलपतपुर, राजेशजी जयपुर, संजयजी सेठी जयपुर, राकेशजी टीकमगढ, निलयजी आगरा, मनीषजी कहान जयपुर, अशोकजी इन्दौर, विनीतजी हटा, गणतंत्रजी आगरा, संतोषजी बकस्वाहा, संयमजी नागपुर, जिनेशजी मुम्बई, सचिनजी सागर, जिनकुमारजी जयपुर, रूपेन्द्रजी जयपुर, अच्युतकांतजी जयपुर, गौरवजी जयपुर, सतेन्द्रजी बरायठा, अविनाशजी कोलारस, प्रदीपजी पथरिया, सचिनजी कोटा, निलयजी कोटा, श्रीमती लताजी देवलाली, श्रीमती आशाजी जयपुर, श्रीमती स्तुतिजी जयपुर, विदुषी प्रतीति पाटील, श्रीमती मोनाजी भारिल्ल जयपुर, श्रीमती प्रेक्षाजी जैन बांसवाड़ा, विदुषी नैना जैन भोपाल आदि का सहयोग प्राप्त हुआ।

प्रात:कालीन प्रौढकक्षायें – प्रात: 5.45 से 6.30 तक प्रौढ कक्षायें डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित गुलाबचंदजी बीना, पण्डित सिद्धार्थजी दोशी रतलाम आदि विद्वानों द्वारा ली गई।

प्रौढ़ कक्षायें – मुख्य प्रवचन के पश्चात् प्रात: प्रवचनसार (चरणानुयोगसूचक चूलिका) की कक्षा ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा और मोक्षमार्गप्रकाशक की कक्षा डॉ. नरेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर व पण्डित अच्युतकांतजी शास्त्री जयपुर द्वारा तथा दोपहर में नयचक्र की कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली और मोक्षशास्त्र की कक्षा डॉ.

मनीषजी शास्त्री मेरठ द्वारा ली गई। सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति के पूर्व गुणस्थान विवेचन की कक्षा पण्डित प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा द्वारा ली गई।

बालवर्ग हेतु प्रतिदिन अनेक कक्षाओं का आयोजन हुआ, जिसका संचालन डॉ. शुद्धात्मप्रभाजी टडैया मुम्बई के निर्देशन में प्रशिक्षणार्थी अध्यापकों द्वारा किया गया, जिसमें सैंकड़ों बच्चे सम्मिलित हुये।

इसप्रकार 52वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर अत्यंत हर्षोल्लासपूर्वक सानन्द संपन्न हुआ।

(उद्घाटन समारोह के समाचार पूर्व अंक (26 मई) में प्रकाशित किये जा चुके हैं।)

53वाँ प्रशिक्षण शिविर जयपुर में

श्री संजयजी दीवान होंगे मुख्य आयोजनकर्ता

श्री महेन्द्रकुमारजी-कुसुमजी गंगवाल की अगुवाई में जयपुर के प्रतिनिधि मंडल ने समारोहपूर्वक डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के करकमलों से ध्वज ग्रहण किया

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : विगत 50 वर्षों से पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा संचालित अनुपम ''श्री वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों'' की शृंखला में 53वाँ प्रशिक्षण शिविर आगामी 19 मई से 5 जून 2019 तक श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में आयोजित होगा।

उक्त शिविर के मुख्य आयोजनकर्ता श्री संजयजी दीवान परिवार, सूरत होंगे।

यहाँ प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 3 जून को आयोजित एक भव्य समारोह में श्री संजय दीवान परिवार की ओर से श्री महेन्द्रकुमारजी गंगवाल एवं श्रीमती कुसुमजी गंगवाल की अगुवाई में जयपुर के प्रतिनिधि मंडल ने समारोहपूर्वक डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के करकमलों से धर्मध्वज ग्रहण किया। इससे पूर्व अध्यक्ष मा.चन्द्रभानजी जैन के नेतृत्व में तीर्थधाम सिद्धायतन के ट्रस्टीगणों ने गाजेबाजे के साथ लाकर उक्त ध्वज डॉ. भारिल्ल को सौंपा।

कार्यक्रम में ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, श्री चन्द्रभानजी जैन (अध्यक्ष-सिद्धायतन-द्रोणगिरी), श्री मुन्नालालजी जैन शाहगढ (मंत्री-सिद्धायतन-द्रोणगिरी), श्री विनोदजी डेवडिया शाहगढ, टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के कार्यकारी महामंत्री श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, श्री निखलेशजी दलपतपुर, श्री अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री जयपुर, श्री लक्ष्मीचंदजी जयपुर, श्री महेन्द्रजी गोधा जयपुर, श्रीमती गुणमालाजी भारिल्ल जयपुर आदि महानुभाव उपस्थित थे।

सभा का संचालन श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर ने किया।

दीक्षांत व समापन समारोह संपन्न

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 6 जून को प्रात: श्री जिनेन्द्र अभिषेक, नित्यनियम पूजन एवं गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के पश्चात् शिविर का दीक्षांत एवं समापन समारोह श्री महेन्द्रकुमारजी गंगवाल जयपुर की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

प्रशिक्षण शिविर की रिपोर्ट पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा ने दी। पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। श्री चन्द्रभानजी एवं पण्डित राजकुमारजी उदयपुर ने उक्त शिविर में सहयोगी बने समस्त विद्वानों, शिविरार्थियों, कार्यकर्ताओं तथा आयोजन समिति का आभार व्यक्त किया।

डॉ. शांतिकुमारजी पाटील ने दीक्षांत भाषण में कहा कि यह दीक्षा का अंत है, शिक्षा का अंत नहीं; अत: आप सभी को पूरे जीवनभर स्वयं तत्त्वज्ञान को सीखना है, यथासंभव प्रचार-प्रसार भी करना है। इसके पश्चात् सभी अध्यापकों को स्मृति-चिह्न प्रदान किये गये।

पण्डित कमलंचदजी ने परीक्षा परिणामों की घोषणा इसप्रकार की-

बालबोध प्रशिक्षण (हिन्दी) में 161 विद्यार्थियों ने परीक्षा दी। इनमें से 134 छात्र प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए, जिसमें 86 छात्र 75% से अधिक अंकों से उत्तीर्ण हुये; 19 द्वितीय श्रेणी, 6 तृतीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुये एवं 2 विद्यार्थी अनुत्तीर्ण रहे।

बालबोध प्रशिक्षण (हिन्दी) में **प्रथम स्थान** श्रीमती प्रियंका जैन धर्मपत्नी श्री स्वतंत्रजी शास्त्री खरगापुर व श्रीमती राजुल जैन धर्मपत्नी श्री संतोषजी शास्त्री बकस्वाहा ने एवं **द्वितीय स्थान** श्रीमती आकांक्षा जैन धर्मपत्नी श्री ऋषभकुमारजी जैन बड़ामलहरा व श्रीमती स्वाति पाटनी धर्मपत्नी श्री राहुलजी पाटनी इन्दौर ने प्राप्त किया।

बालबोध प्रशिक्षण (अंग्रेजी) में 9 विद्यार्थियों ने परीक्षा दी। सभी 9 विद्यार्थियों ने विशेष योग्यता प्राप्त की। **प्रथम स्थान** प्रणव जैन पुत्र श्री विवेकजी जैन मंगलायतन एवं **द्वितीय स्थान** अक्षय जैन पुत्र श्री दिनेशजी जैन टीकमगढ व मुक्ति संचेती-सचिन संचेती मंगलायतन ने प्राप्त किया।

प्रवेशिका प्रशिक्षण में 84 विद्यार्थियों ने परीक्षा दी। इनमें से 74 छात्र प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए, जिसमें 34 छात्र 75% से अधिक अंकों से उत्तीर्ण हुये; 10 द्वितीय श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। प्रवेशिका प्रशिक्षण में **प्रथम स्थान** रश्मि जैन-अरविन्द जैन ग्वालियर ने, **द्वितीय स्थान** संयम जैन पुजारी पुत्र श्री कमलेशजी जैन पुजारी खनियांधाना ने और **तृतीय स्थान** अनिमेष भारिल्ल पुत्र श्री चेतनप्रकाशजी भारिल्ल राघौगढ ने प्राप्त किया।

कार्यक्रम का मंगलाचरण दिव्यांश जैन अलवर ने एवं संचालन पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री जयपुर ने किया।

बाल संस्कार शिविर संपन्न

(1) बांदा (उ.प्र.) : यहाँ दिनांक 6 से 10 मई तक बाल संस्कार शिविर आयोजित हुआ। इस अवसर पर पण्डित दर्शितजी शास्त्री, पण्डित कार्तिकजी शास्त्री, पण्डित जितेन्द्रजी शास्त्री एवं पण्डित सपनजी शास्त्री द्वारा बच्चों की कक्षाएं ली गई। शिविर में अनेक बच्चों ने जैनत्व के संस्कार ग्रहण किये। बच्चों ने दीपावली पर पटाखे न फोड़ने का संकल्प लिया। शिविर में युवा परिषद्, महिला मंडल एवं बालिका मंडल का विशेष सहयोग रहा।

(2) राजकोट (गुज.) : यहाँ पंचनाथ प्लॉट स्थित श्री सीमंधर दिगम्बर जिनमंदिर में दिनांक 2 से 7 मई तक पण्डित सुनीलजी जैनापुरे के सान्निध्य में बाल संस्कार शिविर आयोजित हुआ। इस अवसर पर पण्डित समकितजी शास्त्री, पण्डित शुभांशुजी शास्त्री एवं पण्डित सिद्धार्थजी शास्त्री द्वारा बच्चों की कक्षाएं ली गई। शिविर में लगभग 150 बच्चों ने जैनत्व के संस्कार ग्रहण किये। विशेष बात यह रही कि लगभग 95% बच्चे अजैन थे। अनेक बच्चे जामनगर व सुरेन्द्रनगर आदि स्थानों से भी शिविर में आये।

सभी शिविरार्थियों के लिये नवनिर्मित आचार्य कुन्दकुन्द एवं आचार्य अमृतचन्द्र भवन में विशेष भक्तिमयी कक्षा का आयोजन भी किया गया, जिसमें दोनों आचार्यों के परिचय के साथ-साथ समस्त आचार्य परम्परा का ज्ञान भी कराया गया।

फीनिक्स और लॉस एंजिल्स में धर्मप्रभावना

अमेरिका : फीनिक्स – यहाँ दिनांक 24 से 27 मई तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा गुणस्थान एवं चार अनुयोग विषय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। साथ ही एक दिन णमोकार महामंत्र मंडल विधान का भी आयोजन किया गया।

लॉस एंजिल्स – यहाँ दिनांक 28 से 31 मई तक डॉ.संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा प्रात: नित्य-नियम पूजन के अतिरिक्त दोनों समय 1.30-1.30 घंटे जिनागम के विविध विषयों पर सारगर्भित प्रवचनों का लाभ मिला।

41वें आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आमंत्रण

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा दिनांक 12 से 21 अगस्त तक होने वाले टोडरमल महाविद्यालय के 41वें आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आमंत्रण दिया गया।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल, डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, श्री महेन्द्र-राहुलजी गंगवाल जयपुर, श्री शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित पीयूषजी शास्त्री आदि अनेक महानुभाव मंचासीन थे। संचालन श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने किया।

प्रशिक्षणार्थी सम्मेलन संपन्न

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 5 जून को रात्रि में श्री महेन्द्रजी गंगवाल जयपुर की अध्यक्षता में प्रशिक्षणार्थी सम्मेलन संपन्न हुआ। श्री परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल, श्री अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा आदि महानुभावों के साथ सभी प्रशिक्षक अध्यापकगण भी मंच पर उपस्थित थे।

अनेक प्रशिक्षणार्थियों ने अपने विचार रखे। सभी ने प्रशिक्षण विधि की प्रशंसा करते हुये अपने नगर में पाठशाला संचालन का संकल्प व्यक्त किया।

अन्त में मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने संतोष व्यक्त करते हुए प्रशिक्षणार्थियों को कहा कि अभी जिन साधर्मियों ने आत्मविश्वासपूर्वक अपने भाव व्यक्त किये हैं, वैसे ही कार्य करें। हम सभी मिलकर एक ऐसे आत्मार्थी समाज का निर्माण करें जो स्वयं आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो, अन्य लोगों को इस मार्ग पर लायें और जो लोग इस मार्ग पर बने हुए हैं, उन्हें इससे च्युत न होने दें। इसी में हम सबका कल्याण निहित है। यही वह उपकार है जो जगत के समस्त जीवों के प्रति तीर्थंकर और गणधरदेव भी करते हैं।

कार्यक्रम का मंगलाचरण आगम जैन ने एवं संचालन पण्डित निखलेशजी दलपतपुर एवं संयम जैन पुजारी ने किया।

टोडरमल स्नातक परिषद् का अधिवेशन संपन्न

सिद्धायतन-द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ चल रहे प्रशिक्षण शिविर के अन्तर्गत दिनाँक 26 मई को पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद् का अधिवेशन संपन्न हुआ।

स्नातक परिषद् के कार्यों का परिचय डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर ने दिया। स्नातक परिषद् के सदस्यों द्वारा प्राप्त उपलब्धियों का विवरण पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर ने दिया।

इस अवसर पर श्री टोडरमल स्मारक भवन में संचालित श्री टोडरमल जैन मुक्त विद्यापीठ का दीक्षान्त समारोह संपन्न हुआ, जिसमें मुक्त विद्यापीठ का परिचय पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने दिया तथा इस वर्ष शास्त्री उत्तीर्ण हुये छात्रों को डिग्री भेंटकर सम्मानित किया। तत्पश्चात् ब्र. यशपालजी जैन द्वारा चलाई जा रही कंठपाठ योजना के अन्तर्गत टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थी **नयन जैन बरायठा** ने संपूर्ण समयसार परमागम (प्राकृत गाथाएं) को कंठस्थ कर मंच पर सभी के समक्ष सुनाया। उपस्थित सभी महानुभावों ने मुक्तकंठ से प्रशंसा की। मंगलाचरण कु.प्रतीति पाटील जयपुर ने एवं संचालन पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर ने किया।

अधिवेशन एवं सम्मान समारोह संपन्न

द्रोणगिरि (म.प्र.) : यहाँ प्रशिक्षण शिविर में दिनांक 25 मई को समंतभद्र शिक्षण संस्थान का अधिवेशन एवं सम्मान समारोह संपन्न हुआ। मंगलाचरण वीतराग-विज्ञान पाठशाला घुवारा के छात्रों ने किया एवं संस्थान का परिचय व प्रगति रिपोर्ट श्री प्रद्युम्नजी फौजदार ने प्रस्तुत की।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्बोधन में तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में संलग्न सभी संस्थाओं को आशीर्वचन प्रदान किया। पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने कहा कि हम सभी आत्मकल्याण के मार्ग पर अग्रसर हों एवं अन्य जीवों को भी आत्मकल्याण के मार्ग पर लगायें; यही वह उपकार है जो जगत के समस्त जीवों के प्रति तीर्थंकर और गणधरदेव भी करते हैं। साथ ही श्री अजितजी जैन बड़ौदा ने भी अपना उद्बोधन दिया।

समंतभद्र शिक्षण संस्थान के अधिवेशन के दौरान ही तीर्थधाम सिद्धायतन की संकल्पना/ स्थापना और उसके विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देने के लिये ट्रस्ट के संस्थापक अध्यक्ष श्री चन्द्रभानजी जैन एवं मंत्री श्री प्रेमचंदजी मस्ताई का शॉल/साफा/श्रीफल और प्रशस्तिपत्र भेंटकर अभिनन्दन किया गया। कार्यक्रम में योगसार अनुशीलन का विमोचन मंचासीन अतिथियों के करकमलों द्वारा हुआ।

सम्मान समारोह के अन्तर्गत शिक्षण संस्थान के प्राचार्य श्री देवकीनंदन गुप्ता का दसवीं कक्षा के अच्छे परीक्षा परिणाम हेतु एवं वरिष्ठ ट्रस्टी श्री बाबूलाल जैन शाहगढ द्वारा लगभग 1 एकड़ जमीन ट्रस्ट को प्रदान करने के उपलक्ष्य में सम्मान किया गया। इसके अतिरिक्त इस वर्ष दसवीं में उत्तीर्ण छात्रों को प्रोत्साहन राशि देकर सम्मान किया गया।

नवनिर्मित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय भवन का हुआ लोकार्पण

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के संकल्प दिवस के अवसर पर ही प्रात:काल तीर्थधाम सिद्धायतन के नवनिर्मित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय भवन का लोकार्पण डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल आदि सभी विद्वानों और शिविरार्थियों की उपस्थिति में मुमुक्षु समाज के भामाशाह श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा द्वारा नाम पट्टिका के अनावरण के साथ किया गया।

इस अवसर पर उन्होंने सिद्धायतन-द्रोणगिरि में चल रही तत्त्वज्ञान की गतिविधियों की भरपूर प्रशंसा करते हुए उसके संचालन में भरपूर सहयोग प्रदान करने की घोषणा की।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें –

वेबसाईट – www.vitragvani.com

संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

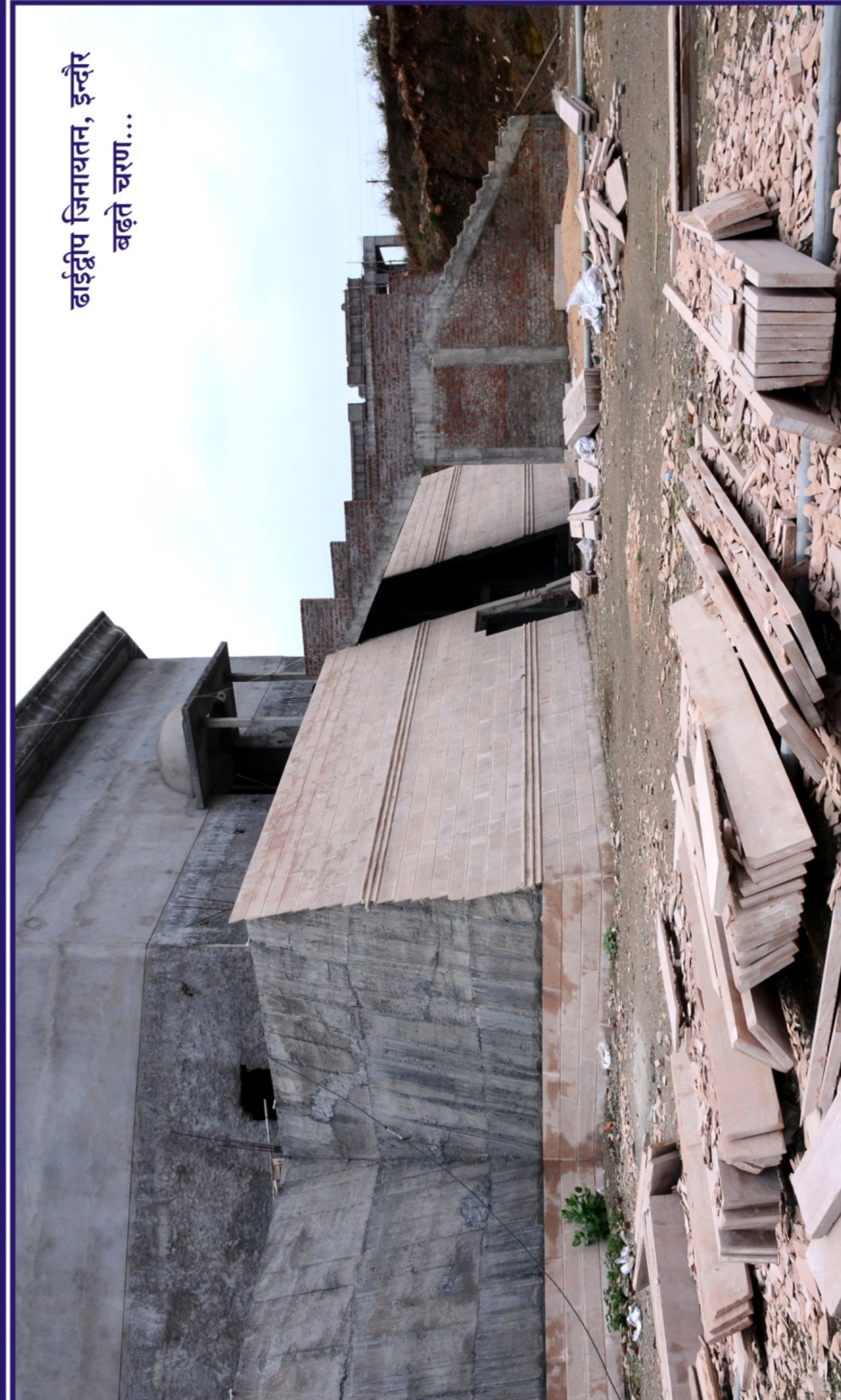

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में जोधपुर के कारीगरों द्वारा लाल पत्थरों का कार्य करने का दृश्य

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2018-20*

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में बन रहे गेस्ट हाउस के फर्श पर लग रही टाइल्स का दृश्य

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय, नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**